1937A Rich Class

Dhanik-Varg (Manuscript, 1937)

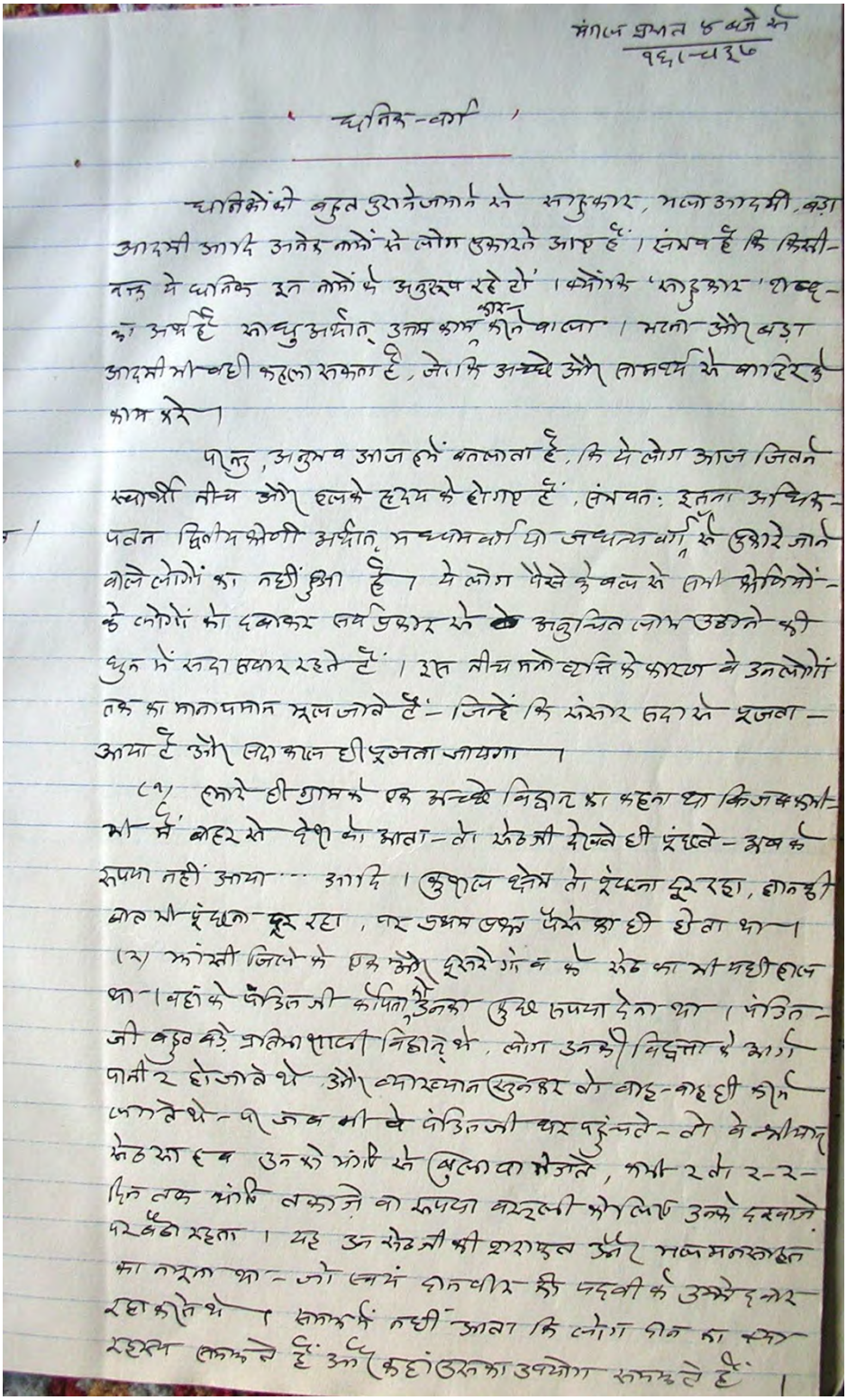

मंगल प्रभात ४ बजे से
१६।८।३६

'धनिक-वर्ग'

धनिकों को बहुत पुराने जमाने से साहुकार, भला आदमी, बड़ा आदमी आदि अनेक नामों से लोग पुकारते आए हैं। संभव है कि किसी-वक्त में धनिक इन नामों के अनुरूप रहे हों। क्योंकि 'साहुकार' शब्द-का अर्थ है साधु अर्थात् उत्तम कार्य करने वाला। भला और बड़ा आदमी भी वही कहला सकता है, जो कि अच्छे और सामर्थ्य से बाहर के काम करे।

परन्तु, अनुभव आज हमें बतलाता है, कि ये लोग आज जितने स्वार्थी नीच और हलके हृदय के हो गए हैं, संभवतः इतना अधिक-पतन द्वितीय श्रेणी अर्थात् मध्यम वर्ग या जघन्य वर्ग से पुकारे जाने वाले लोगों का नहीं हुआ है। ये लोग पैसे के बल से सभी श्रेणियों-के लोगों को दबाकर सब प्रकार से अनुचित लाभ उठाने की धुन में सदा तैयार रहते हैं। इस नीच मनोवृत्ति के कारण वे उन लोगों तक का मानापमान भूल जाते हैं- जिन्हें कि संसार सदा से पूजता-आया है और सदा काल ही पूजता जायगा।

(१) हमारे ही ग्राम के एक अच्छे विद्वान का कहना था कि जब कभी-भी मैं बाहर से देश को आता- तो सेठजी देखते ही पूछते- अब के रुपया नहीं आया ··· आदि। कुशल क्षेम तो पूछना दूर रहा, हालचाल भी पूछना दूर रहा, पर प्रथम प्रश्न पैसे का ही होता था।

(२) झांसी जिले के एक और दूसरे गांव के सेठ का भी यही हाल था। वहां के पंडित जी कवि थे, उनका कुछ रुपया देना था। पंडित-जी बहुत बड़े प्रतिभाशाली विद्वान् थे, लोग उनकी विद्वत्ता के आगे पानी २ हो जाते थे और व्याख्यान सुनकर तो वाह-वाह ही करने लगते थे- पर जब भी वे पंडितजी घर पहुंचते- तो वे श्रीमान् सेठसाहब उनको मांग से बुलवा भेजते, तथा २ तो २-२-दिन तक मांग तकाज़े का रुपया वसूली के लिए उनके दरवाजे पर बैठा रहता। यह उन सेठजी की शराफत और भलमनसाहत का नमूना था- जो स्वयं दानवीर की पदवी के उम्मेदवार रहा करते थे। समझ में नहीं आता कि लोग धन का क्या रहस्य समझते हैं और कहां उसका उपयोग समझते हैं।

इसके दान का तो रहस्य यही है कि जिसके स्वयं दाता को भी दान
प्राप्ति उपलब्ध हो और लेने वाले जन को भी निराकुलता उत्पन्न
हो, मानसिक संक्लेश एवं आर्तता भावना से दूर हों, क्योंकि जिस जीव
के संक्लेश जितना ही अधिक होगा - उसके उतने ही अधिक दुष्कर्मों का
बंध होगा और जो मनुष्य ऐसे व्यक्ति के संक्लेश-निवारण में सहायक
होगा - वह उतने ही अधिक सुकृत-पुण्य का अधिकारी होगा।
जब हम दूसरे के हृदय में दुःख शोक-संताप आदि उत्पन्न करके
असाता वेदनीय कर्म को बांधते हैं, तो भला जब हम किसी के
दुःख, संताप आदि को मेटेंगे - तो क्यों नहीं हमारे साता वेदनी-
य कर्म का बंध होगा, - और क्यों नहीं हम इससे पुण्य एवं यश
के अधिकारी होंगे।

पर आज का धनिक वर्ग एक ओर जहां गरीब, असहाय-
लोगों का विपुल परिश्रम से धन चूसता है - वहां दूसरी ओर पढ़े-
लिखे कुछ लोगों को थोड़ी बहुत सहायता करके दानवीर, दीन-
वत्सल आदि पदवियों का धारी बन जाता है। ऐसी स्थिति में तो
वे पढ़े लिखे भी इस दुष्कर्म के भागी कहे जाना चाहिए जो कि
जरा से प्रलोभन में आकर इस प्रकार से उनकी दानवीरता का
विज्ञापन फैलाया करते हैं; क्योंकि ऐसे लोग धनिकों की बढ़ती
हुई धन-तृष्णा को, यश वृद्धि को बढ़ाने के लिए और भी प्रोत्सा-
हन देते हैं। मुझे तो सदा ही ऐसा लगता आया है कि ऐसे धनिकों
का दिया दान लेना तो दूर रहे - पर उनके यहां का पानी पीना भी
गरीबों के खून पीने के समान है, क्योंकि आखिर तो वह गरीबों
के खून-पसीना से ही लाया गया है, न कि स्वयं कुएं पर जाकर और
अपने हाथ से खींच करके लाया गया है।

मेरे अनेकों धनिकों से बड़ी घनिष्ठता रखने के अनेक
अवसर आए हैं, पर मैं तो अपनी स्वाभिमानी मनोवृत्ति के कारण
सदा ही उनसे बचता आया हूं। यद्यपि ऐसा करने के लिए मुझे
अत्यधिक तपस्या करना पड़ी है, आर्थिक हानि उठाना पड़ी है
और मेरे पुत्रों तक को संकट में डालना पड़ा है, पर अपने मन की
तो आत्मा सदा यही कहती रही है कि किसी के सामने दीनता
दिखलाना तो नीचता का काम है और उससे नीच गोत्र कर्म का

ही बंधा होता है। इस लिए मैं जब हमने ऐसी नीचताओं का आश्रय लिया तब तो आज हमें ज्ञानवान् होने पर भी दूसरों के सामने दीनता का परिचय देने के लिए बाध्य होना पड़ता है अवसर आ रहा है और यदि आज दीनता का उनके सामने प्रदर्शन किया गया - तो पता नहीं आगे और कौन २ सी परिस्थितियों में हीनावस्था का अनुभव करना पड़ेगा ।

कुत्ते और सिंह में प्रायः रूप से ही कुत्ता तुच्छ जाति का उपमान है और सिंह उपकारी । यदि किसी आप किसी उपकारी आदमी मानव से कह दीजिए कि साहब आप तो कुत्ते हैं या उनके समान हैं, तो देखिए कि आपका क्या सत्कार होता है ? और यदि उसी के स्थान पर आप कहिए कि साहब आप तो सिंह हैं या सिंह समान हैं, तो देखिए कि वह कितना अधिक प्रसन्न होता और किस नज़र से आपको देखता है, इन दोनों बातों में आपको जमीन-आसमान का सा फ़र्क़ दिखाई देगा । भला इतना फ़र्क़ क्यों ? इस प्रश्न के तह में घुस

अनेक गुण होवे / दुर्गुण

कर जब हम विचार करते हैं, तो पता चलता है कि कुत्ते में एक बहुत-बड़ा अवगुण है और वह यह - कि वह एक रोटी के टुकड़े के पीछे दिन भर पूंछ हिलाता फिरा करता है - अर्थात् एक टुकड़े के पीछे अपना ध्यान दे देता है और जो टुकड़ा फेंके उसी की बजाने लगता है उसे यह ज्ञान नहीं रहता कि कल मैं किस की बजा रहा था और आज किस की बजा रहा हूं । पर सिंह की वृत्ति इससे दूसरी ही होती है। वह कभी भी रोटी के टुकड़े के पीछे अपना ध्यान नहीं [illegible] करता है यहां तक कि पिंजरे में बंधा हुआ भूखा सिंह भी खाना सामने आने पर पहले ही खाना देने वाले की ओर देखेगा और पीछे खाना खायगा । यही कारण है कि उसकी उपमा दिए जाने पर लोग फूल कर कुप्पा हो जाते हैं और अपने में उच्च सिंहपने का अनुभव करने लगते हैं। दूसरे विद्वानों ने हाथी और कुत्ते के अन्तर की तुलना की है उसी प्रकार करके दिखलाया है कि कुत्ता तो रोटी के टुकड़े देने वाले के पीछे-पीछे पूंछ हिलाता फिरेगा, आगे पैरों को [illegible] चाटेगा और चरणों में गिर कर अपने मुंह से खड़े होते हुए पेट तक को दिखलायगा - पर हाथी सैकड़ों खुशामद किए जाने पर ही खाना खायेगा - जैसा कि कहा है:—

लाङ्गूलचालनमधश्चरणावपातं, भूमौ निपत्य वदनोदरदर्शनञ्च ।

श्वा पिंडदस्य कुरुते, गजपुंगवस्तु धीरं विलोकयति चाटुशतैश्च भुंक्ते ॥

अपने राम की भी यही बात है, जितनी नौकरी करेंगे खूब तनमन से बजायेंगे पर उसका पारिश्रमिक लेते समय हमारी दीन वृत्ति से पेश नहीं आयेंगे। लोग इसे भले ही मेरी अभिमानी वृत्ति कहें या कुछ भी कहें - पर मुझे तो उसके प्राप्त करने के लिए ऐसा लगता है - मानो मैं कोई भिक्षा मांगता होऊं' बस, इस विचार के आते ही हृदय पैसा लेने से इनकार कर देता है।

अभी हाल ही की बात लीजिए - मार्च में स्कूटर खरीदने के वास्ते (दूसरी शादी होने से पूर्व) सेठ सा० से कुछ पेशगी रुपया चाहा - पर कुछ गोलमाल उत्तर मिलने पर अपने मन ने लेने से इनकार कर दिया। उस वक्त याद पड़ा कि यहीं भी रुपया जमा - करके रखना भी आत्म हत्या जैसा पाप है, क्योंकि यदि मेरा रुपया - मीलों में जमा न होता - तो फिर दूसरे के सामने हाथ फैलाने का मौका न आता।

उसके बाद की ही बात लीजिए - जब डिपाजिट अदा हुई और पुन: उसके जमा कराने के लिए सेठ सा० से बात की, तो फिर गोलम-मटोल का जवाब। डिपाजिट रखने से इंकार हो - सो बात नहीं किंतु सिर्फ यह दिखलाने के लिए कि हम तुम्हारे ऊपर कितना अधिक उपकार करते हैं - जो औरों को तो ४) सैकड़ा ब्याज देते हैं और आपको ५) सैकड़ा। पर यह बात तो मेरी शान के खिलाफ जंची कि १) रु० के पीछे इतने आभारी होने की क्या आवश्यकता है और डिपाजिट को पुन: रखने का मैंने विचार बदल दिया।

और तीसरी बात लीजिए - शादी के लिए। डिपाजिट के मीलों में अदा होने के पूर्व रुपया न मिल सकने के कारण मैंने सेठ सा० का कुछ रुपया पेशगी लिया, सेठ सा० ने तो या - ज्यों पंडितजी अब बंध गए हैं तो ८-८ और ९-९ घंटे ड्यूटी क्यों न करवाई जाय - और लो बैठ गए टाइम-टेबिल बनाने। जब मेरे सामने उक्त बात लाई जा रही थी कि उसके पूर्व ही अपने गहने गिरवे रख का सारा रुपया उनका वापिस कर दिया। यद्यपि इससे मेरी बढ़ी कठिनाई से जमा की गई रकम ८ सैकड़ा चूना-सूत या तीन लेह होगई - पर एक लम्बे समय तक के लिए उस आन बान को कौन मोल ले-

स्थान दे सकता था और महा संक्लेश परिणामों के द्वारा धन संचय भी कर सकता था। कुछ भी हो इस पौद्गलिक या भौतिक लक्ष्मी की अपेक्षा उसमें आत्मिक पतन का पलड़ा अधिक दिखाई देता है, किन्तु भला मैं इस मनुष्य जीवन की अनमोल घड़ियों को कुछ कौड़ियों के पीछे कैसे बेच सकता था या बर्बाद कर सकता था। यह ठीक है कि श्रीमान को जाते समय सेठानी जी ने व्यंग्य रूप से वैसा नहीं करने का इशारा किया था स्पष्ट शब्दों में कहा कि आज कल आपका दिमाग ठिकाने नहीं मालूम पड़ता - मैंने भी हंसते हुए कहा - आखिर तो मैं हूं तो - पागल का ही बेटा, फिर भला दिमाग ठिकाने कहां रह सकता है। पर वे बेचारी मेरी मानसिक स्थिति को और उसमें छिपे हुए आत्म रहस्य को क्या जान सकती हैं। उनकी दृष्टि में तो उसी वस्तु का महत्व अधिक है, जिसके वातावरण में वे जन्म से पाली पोषी आ रही हैं।

पर मेरी दृष्टि में तो उसी का मूल्य अधिक है - जो कि हमारी निधि है। क्या ये रुपये-पैसे या हीरा जवाहरात उस निधि की तुलना कर सकते हैं? जहां ये पौद्गलिक निधि आत्मा को उत्तरोत्तर अशांति, संक्लेश पहुंचाने के साथ नीचे गिराती है, संसार में डुबाती है - वहां वह आत्मिक-निधि उल्टी सच्ची शांति-परम-आनन्द पहुंचाने के साथ-साथ ऊंचे उठाती है और संसार से उद्धार करती है। वाह - किसी कवि ने कितना सुन्दर कहा है:—

आशायाः ये दासास्ते दासाः सर्वलोकस्य।
आशा येषां दासी, तेषां दासायते लोकः ॥१॥

यद्यपि मेरी इस विचित्र [illegible] को जब मेरे कुटुम्बी सुनेंगे या मेरी नव-परिणीता - जीवन संगिनी सुनेगी - तो निश्चित है कि उनके हृदय में गहरी चोटें लगेंगी - पर मैं लाचार हूं — पैसा कमाने के लिए भले ही एक-एक पैसे के लिए भविष्य में कठोर श्रम करना पड़े, पर इस दीन वृत्ति से वह कौन सा सुख भला नज़र आता है। जहां इस दीन वृत्ति से बने हुए धनिकपन में मैं अपनी आत्म निधि से हाथ धो बैठता हूं, वहां मैं एक-एक पैसे के लिए मज़दूरी करते हुए या भूखे मरते हुए उसे पाता हूं, उसके अति समीप पहुंचता हूं। पाठकगण, तू ही बता — कहीं मैं विपरीत बात तो नहीं कह रहा हूं या कुमार्ग पर तो अग्रेसर नहीं हो रहा हूं? यदि नहीं, तो फिर अब मुझे किसी की भी चिन्ता नहीं है।

[illegible]